मौलाना सै0 इब्ने हसन जारचवी साहब क़िब्ला

नमाज़

अगर हम इस्लामी इबादातों पर ग़ौर करें तो यह हक़ीक़त साफ तौर पर सामने आ जाती है कि इनके अन्दर रूहानी फायदों के अलावा सियासी, मआशी और कल्चरल फ़ायदे भी छुपे हुए हैं। ख़ुदा की बन्दगी और नमाज़ के तरीक़े दुनिया के सारे मज़हबों में मौजूद हैं, मगर इस्लामी नमाज़ सब से निराली शान रखती है। यहाँ यहूदी रिब्बियों और ईसाई राहिबों को वह मुराक़बा नज़र नहीं आता जो ख़ानख़ाहों के कोनों में बैठकर सरअन्जाम पाता था, न बुद्ध मत के भिक्षुओं और हिन्दू धर्म के साधुओं की तरह यह इबादत का तरीक़ा विहारों या ऐकान्त कुटियों का मोहताज नहीं है, न यहाँ कई तरह के मन्दिर और इबादतगाहें हैं। जो अलग–अलग ख़ुदाओं और देवताओं की पूजा के लिए ख़ास हों, न दर्जों और तबक़ों का इम्तियाज़ है कि जिस का मुज़ाहेरा बराबरी की रूह को धो दे। आइये मस्जिद के अन्दर आकर देखिये। छोटे बड़े, अमीर ग़रीब, काले गोरे, अरब और ग़ैर अरब सब एक सफ़ में खड़े हैं। जिसको जहाँ जगह मिल गई खड़ा हो गया। सजदे के वक़्त कहीं फ़क़ीर के पैर बादशाह के सर के आगे हैं, और क़याम के वक़्त कहीं मोटे–मोटे होंट वाला काला हब्शी ग़ुलाम गोरे आक़ा के साथ कंधे से कंधा मिलाये खड़ा है। सब एक ही ज़बान में अपने ख़ालिक़ से अर्ज़ व सवाल कर रहे हैं। मकान व ज़बान के फ़र्क़ और तबकों और दर्जों के सारे इम्तियाज़ यहाँ ग़ायब हैं। जोज़फ़ हील (Joseph Hell) ने अपनी किताब तमद्दुने अरब (The Arab Civilisation) में क्या ख़ूब फ़रमाया हैः–

"जिस किसी ने मुसलमानों को नमाज़ के वक़्त सफ़ों में खड़ा हुआ और हैरतअंगेज़ बराबरी, क़ायदे और सुकून के साथ रुकु सजदा करते हुए देखा है, वह इस मुनज़्ज़म इबादत के तरीक़े की तालीमी क़द्र व क़ीमत का एतेराफ किये बिना नहीं रहेगा। अगर हम (इस वक़्त) सिर्फ़ यह याद रखें कि (अरब) एक ऐसी माज़ूर क़ौम थे जो ग़ैर की मर्ज़ी के सामने झुकना पसन्द न करते थे, यह वह लोग थे जो इताअत के शौक़ से बिल्कुल अन्जान थे, तो फौरन हमको यह अन्दाज़ा हो जायेगा कि क़ानून और क़ायदे की रूह को जगाने के लिए यह इबादत का तरीक़ा कितना अहम है। यक़ीन मानिये कि इसीलिए यह कहा गया है कि मस्जिद ही इस्लाम की सबसे पहली फौजी तरबियतगाह है। जमाअत की नमाज़ों के वक़्त मोमिनों को एक दूसरे से मिलना जुलना एकता व इत्तेहाद की रूह को बढ़ाता है और इन्सानी बराबरी का शौक़ बढ़ाता था, अरब के मुल्क में यह ख़यालात बिल्कुल न थे।"

इस किताब में जगह–जगह यह बताया गया है कि इस्लाम दीने फितरत है। इसकी यह ख़ूबी इबादत में भी अलग नज़र आती है। वह दूसरे मज़हबों की तरह इन्सान के फितरी ख़यालात को नज़रअन्दाज़ नहीं करता। वह यह नहीं कहता कि तुम जंगलों, पहाड़ों की गुफ़ाओं, समुन्द्रों और दरयाओं के पानी में जाकर इबादत करो। या एक टाँग पर खड़े होकर रात–रात भर मंतर जपते रहो। वह इसकी इज्तेमाई बनावट (Gregarious Instinct) की रिआयत करता है। इसकी शहरी चाहत को

नज़र अन्दाज़ नहीं करता। ज़िन्दगी की दौड़ में जो मुश्किलें उसको पेश आती हैं उनको सामने रखता है। और नमाज़ का वह तरीक़ा बताता है जो एक तरफ बहुत आसान है और दूसरी तरह हर हैसियत से फ़ायदे वाला है। ज़रा नमाज़ के वक़्तों पर नज़र डालिये। जब आप रात भर के आराम से जागते हैं तो उस ख़ुदा के शुक्रिये को दोगाना अदा करते हैं जिसने आपको नींद की नेमत से नवाज़ा और उसके सुकून देने वाले असरात से आपकी रूह और जिस्म को सुकून दिया। खु दा का नाम लेकर आप अपना कारोबार शुरु करते हैं। ज़वाल का वक़्त आते—आते आपका जिस्म आराम और सुकून चाहता है अब आप थोड़ी देर के लिए कारोबार बन्द कर देते हैं और उस ख़ुदा के दरबार में हाज़िर होते हैं जिसकी दी हुई ताक़तों के बल बूते पर आप अपना कारोबार चलाते हैं।

इस ठहराव के बाद आप काम में लग जाते हैं और शाम को जब आप अपनी दिन भर की मेहनत से छुट्टी पाते हैं तो फिर अल्लाह के सामने अपना सर झुकाते हैं कि उसने यह दिन भलाई और आसानी के साथ गुज़ार दिया। फिर जब आप सोने के लिए जाने लगते हैं तो आख़िरी बार फिर अल्लाह के सामने सर झुकाते हैं और रात के भलाई और आसानी के साथ गुज़रने के लिए दुआएं माँगते हैं।

ऐश व आराम की ज़िन्दगी गुज़ारने वालों को इन रूहानी वक़्फ़ों के माद्दी फ़ायदों का एहसास हो या न हो मगर मज़दूर पेशा लोग जानते हैं कि मेहनत व मशक़्क़त के दौरान में यह वक़्फ़े कितना सुकून और आराम देने वाले होते हैं और इन वक़्फ़ों से मज़ा लेने के बाद थके मांदे बदन के हिस्सों में किस तरह नये सिरे से काम करने की ख़ूबी पैदा हो जाती है।

रोज़ा

पारसियों को छोड़कर दुनिया में शायद ही कोई क़ौम ऐसी हो जो ''रोज़े'' के फ़ायदों से इन्कार कर सके, या जिसके दीन व मज़हब में रोज़ा किसी न किसी शक्ल में मौजूद न हो। मगर इस्लामी रोज़े की शान सबसे अलग है। यहाँ रोज़ा भी एक साथ किया जाने वाला अमल और क़ौमी व मिल्ली काम की शक्ल बन गया है। आज जब यूरोप में जंग का बाज़ार गर्म है और लड़ने वाले आपस में एक दूसरे की नाकाबन्दी कर रहे हैं तो हम बार बार (Rationing) का नाम सुनते हैं। यानी ज़िन्दगी की ज़रूरतों और ख़ास कर खाने पीने की चीज़ों पर हुकूमत की निगरानी है, और हर शख़्स को ''नपा शोरबा और गिनी बोटी'' दी जाती है। इस्लाम अपने मानने वालों को हर साल महीने भर तक आधा खाना (Half Ration) पर रख कर एक तरफ तो उनके अन्दर फौजी ज़िन्दगी को बाक़ी रखता है और दूसरी तरफ किफ़ायत शिआरी, दिल मारना और दूसरों के दुख दर्द के एहसास की आदत डालता है। फ़र्ज़ कीजिये कि दुनिया में साठ करोड़ मुसलमान हैं और हर मुसलमान अपना ख़ाना औसतन चार आना फ़ी वक़्त ख़र्च करता है तो एक महीने में वह सात रुपये आठ आने बचा सकता है। अब इन सात रुपये आठ आने को साठ करोड़ मुसलमानों से गुणा कर दीजिये और देखिये कि मुसलमान अगर चाहें तो रमज़ान में कितनी बड़ी दौलत बचाकर दीन व मिल्लत के फ़ायदे के कामों में ख़र्च कर सकते हैं। जिन लोगों ने रमज़ान के महीने में अफतार के वक़्त मुसलमानों इज्तेमाआत, उनकी मस्जिदों की चहल—पहल और फिर ईद के इत्तेहाद परवर नज़ारे देखे हैं, वह अन्दाज़ा लगा सकते हैं कि रोज़ों के इस इज्तेमाई मुज़ाहरे से तमद्दुन और सियासत के कैसे—कैसे नुकते हल होते हैं, और एकता और बराबरी को उससे कितनी ताक़त मिलती है।

अगर ग़ौर से देखा जाए तो इन्सान की सारी तबाहियाँ दो फितरी चाहतों की वजह से सामने आती हैं:— (1) खाना—पीना (2) जिन्सी

चाहत। रोज़ा इन्हीं दो फितरतों को क़ाबू में लाने की प्रेक्टिस है। जैसे रमज़ान का महीना मुसलमानों के लिए एक सालाना ट्रेनिंग कैम्प (तरबियतगाह) है जहाँ क़ायदे क़ानून की तालीम व तरबियत का सामान तैयार किया जाता है। नीचे दी हुई आयत में इस हक़ीक़त की तरफ इशारा हैः–

''ऐ ईमान वालो! तुम पर भी रोज़े उसी तरह फ़र्ज़ किये गये जिस तरह तुम से पहले लोगों पर फ़र्ज़ किये गये थे ताकि तुम परहेज़गारी हासिल करो।''

अगर नमाज़ ज़ाहिरी बराबरी पैदा करती है तो रोज़ा अन्दुरूनी बराबरी की बुनियाद डालता है। इसकी बदौलत अमीर और ख़ुशहाल लोगों को अपने ग़रीब और भूखे भाईयों की तकलीफ में शरीक होने का मौक़ा मिलता है। वह सुबह से शाम तक भूखे और प्यासे रहकर उस तकलीफ का एहसास कर लेते हैं जो फ़ाक़े की वजह से उनके ग़रीब भाईयों को सताती रहती है। और इस तरह हमदर्दी का शौक़ उनके दिल में मौज़ें मारता है और वह नीचता जो फ़ाक़ा करने वाले लोगों की तरफ से उनके दिल में बस गई थी वह दूर हो जाती है।

(बक़िया .... रमज़ान का महीना और शबे क़द्र)

खुदा के सामने अपने आमाल को सही करे। इस मसले में वह जितना अल्लाह की रहमत से फ़ाएदा उठा सकता है दूसरे ज़माने में नहीं उठा सकता। इस अज़ीम महीने की एक बड़ी ख़ास बात यह है कि इसमें शबे क़द्र भी है। यह वह मुबारक रात है जिसमें कुरआन करीम नाज़िल हुआ और रसूले अकरम[स०] के ज़रिये से सारी इन्सानियत को वह इलाही क़ानून हासिल हुआ जो क़यामत तक के लिए आख़िरी है। (यानी इसके बाद अब कोई नयी शरीयत या क़ानून नहीं आने वाला है) अल्लाह ने शबे क़द्र को ऐसे एक हज़ार महीनों से अफ़ज़ल और बेहतर क़रार दिया है जिसमें कोई शबे क़द्र मौजूद न हो। इस बात में बहुत से क़ौल है कि शबे क़द्र कौन सी रात है? और किस महीने की रात है? मगर ज़्यादा तर मुहद्दिसीन और मुफ़स्सिरीन का यही कहना है कि यह मुबारक रात रमज़ान ही में है और खुदा के इस इरशाद से भी इसकी ताईद होती है कि कुरआन को रमज़ान में नाज़िल किया गया हैः–

''वह रमज़ान का महीना है जिसमें कुरआन नाज़िल किया गया।'' (बक़रः–105)

दूसरी जगह यह भी फ़रमाया गया है किः–

''हम ने उस (कुरआन) को शबे क़द्र में उतारा है।'' (क़द्र–1)

यानी हमने कुरआन को शबे क़द्र में नाज़िल किया है। जब इन दोनों आयतों के मतलब को मिलाकर देखा जाता है तो यह बात साफ तरीक़े पर समझ में आती जाती है कि शबे क़द्र रमज़ान ही में है।

इस मसअले में भी कई क़ौल हैं कि शबे क़द्र रमज़ान की किस रात का नाम है मगर ज़्यादातर लोग इसी नज़रिये के क़ायल हैं कि यह रात रमज़ान के आख़िरी दस दिनों में है और यह इकाई की रात है यानी इक्कीसवीं, तेईस्वीं, पच्चीसवीं, सत्ताईस्वीं या उन्तीस्वीं रातों में से ही कोई रात है।

मुख़्तसर ये कि असली शबे क़द्र को इन रातों में छिपा दिया गया है ताकि लोग इस रात की बुज़ुर्गी और फ़ज़ीलत और सवाब को हासिल करने के लिए हर रात में इबादत करते रहें और ज़्यादा से ज़्यादा सवाब हासिल करें। एक हदीस में सरवरे दो आलम[स०] ने फरमायाः ''जो शख़्स शबे क़द्र में ईमानदारी और सच्ची नीयत के साथ खुदा की इबादत करता है उसके पिछले गुनाह माफ़ कर दिये जाते हैं। मगर इसका मतलब यह हरगिज़ नहीं हो सकता कि लोग इत्मिनान से गुनाह करते रहें और यह समझ लें कि जब शब्र क़द्र आएगी तो सब गुनाह माफ़ करा लेंगे। हक़ीक़त में गुनाह सिर्फ़ उन लोगों के माफ़ किये जाएंगे जो अपने गुनाहों पर दिल से अफ़सोस करे और शर्मिन्दा हों और यह तय कर लें कि आईन्दा कोई गुनाह न करेंगे। अल्लाह हम सब मुसलमानों को इस अज़ीम रात की बरकतों से फ़ाएदा उठाने की तौफ़ीक़ अता करे और हमें अपने सच्चे बन्दों में शुमार कर ले। ◆◆◆